Indian Scholar
ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
An International Multidisciplinary Research e-Journal

केदारनाथ अग्रवाल का साहित्य एवं युगीन चेतना

डॉ. अंजना सिंह
गुरूद्वारा मोहल्ला, वार्ड नं 10
गुरूद्वारे के पास, अम्बाह
जिला मुरैना (म.प्र.) 476111

केदार जी चिन्तन बहुआयामी है, उनके लेखन मे गॉव– ाहर, पूंजीपति–निर्धन वर्ग, राजनीति, न्याय–व्यवस्था आदि सभी का चित्रण मिलता है।

साहित्य की सबसे बड़ी वि ोशता यह है कि – ''वह समाज का मूल में सक्रिय क्रांतिकारी भाक्तियों को पहचानकर और उनके द्वारा बढ़ते हुए आन्दोलन का उल्लेख करके पूंजीवाद के ना ा और निम्न वर्ग की विजय में पूरी आस्था व्यक्त करें, जिसमें निरा ाा तथा जीवन के दांव हारे हुए निम्न स्तर के लोगों मे आ ाा का संचार हो और अपने को इस योग्य बना सकें कि समाज की विशम परिस्थितियों से वीरता के साथ संघर्श कर सकें।''[1]

केदार का जीवन प्रेम एक वस्तुवादी का जीवन प्रेम है क्योकि यथार्थ का बोध उनकी लेखनी मे मिला हुआ है। यथार्थ के बोध से आ ाय है कि व्यक्ति के यथार्थ और समाज के यथार्थ को समन्वित रूप से देखने वाली ऐतिहासिक दृश्टि।

केदार जी ने अपने भाब्दो मे इस बात को स्पश्ट करते हुये लिखा है कि ''मेरी कविताओं मे मेरा अनुभूत व्यक्तित्व तो है ही साथ ही साथ युग और यथार्थ बोध भी है। प्रत्येक कविता आत्मान्वेशिणी होते हुए भी यथार्थन्वेशिणी भी है। एक ओर वह व्यक्तित्व से भरपूर डूबी हुई है, दूसरी ओर वह व्यक्तित्व से हटी हुई तटस्थ भी है। उसकी तटस्थता उसकी सिद्धी है वही तटस्थता उसे मेरे व्यक्तित्व से बाहर, काव्य क्षेत्र मे जीवित रखती है।''[2]

केदार जी चेतना, मूलतः किसान की चेतना है क्योंकि वह किसानी परिवार के थे। गॉव मे उनका बचपन बीता गॉव की छाप उनके व्यक्तित्व मे साफ दिखाई देती है इसीलिये उनकी चेतना प्रेमचंद के समान ही है। उन्हे खेतिहर मजदूरों से गहरी सहानुभूति है।

उनकी कविताओं मे धूप नही, यह
बैठा है खरगो ा पलंग पर
उजला, रोएंदार मुलायम
लिपट गई जो धूल पॉव से
वह गोरी है इसी गॉव की

जिसे उठाया नही किसी ने
इस कुठाँव से।

केदार के समय कवि–व्यक्तित्व मे कवि की जीवन–आस्था के स्वर ने ही मुझे सदा बड़े गहरे रूप में आकर्शित किया है। इस जीवन–आस्था का पहला चरण है जीवन के प्रति, समग्र जीवन के प्रति स्वीकार भाव, जिसका ही जैविक–ऐन्द्रिक स्तर है यह जीने मात्र की संयत उद्धाम वासना जो ऐसे इन्द्रधनुशी रूपों मे यहॉ चित्रित हुआ है।

केदार जी व्यापक संवेदनाओं का कवि है। क्योंकि सम्पूर्ण जीवन उसकी काव्य भूमि है। व्यक्ति समाज, नगर, गॉव, प्रकृति–पुरूश, सत–असत्, अपना–पराया सब कुछ उसके कवि उनके मन को पकड़ता है, क्योंकि उसके जीवन के समग्र स्वीकरण का भाव है। यही जीवन आस्था उसे अपने प्रति, अपनी सहज संवेदनाओं की मौलिक काव्यात्मकता के प्रति भी आस्थावान बनाती है। मुण्मय को चिन्मय बनाने वाला तो स्वयं कवि है, फिर किस बात की चिन्ता। इस प्रसंग मे कवि की और भी सुन्दर रचनाऐं आपके साथ बांटकर पढ़ने के लोभ मे नवीन संवरण कर पा रहा हूॅ। प्रकृति को कवि ने हर रंग मे देखा है, प्यार किया है। रात का यह दृ य देखिए–

दिन हिरन–सा चौकड़ी भरता चला
धूप की चादर सिमट कर खो गयी,
खेत, घर, वन गॉव का
दर्पण किसी ने तोड़ डाला,
भाम की सोना–चिरैया
नीड़ मे जा सो गयी,
पेड़ पौधे बुत गये जैसे दिये,
केन ने भी जाँघ अपनी ढाँक ली
रात है यह रात, अन्धी रात,
और कोई कुछ नही बात।

इस नदी को देखिए, कवि ने कैसी अछूती दृश्टि से देखा है–

आज नदी बिल्कुल उदास थी,
सोयी थी अपने पानी में,
उसके दर्पण पर
बादल का वस्त्र पड़ा था।
मैनें उसको नही जगाया,
दबे पॉव घर वापस आया।

मै कहना चाहता हूॅ कि ऐसी ममता से लिखे गये इतनी आधुनिक 'सेंसिबिलिटी' के प्रकृति–चित्रण हमारे काव्य कम में है।

केदार जी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से यह कहा है कि उनका जैसे–जैसे विकास होता गया वैसे–वैसे कविता भी विकसित होती गई है। यह सिर्फ मूढ़मति लोगों को ही समझ में नही आयेगा कि एक ही कवि में एक ही वक्त मे कविता के अनेक स्तर मौजूद होते है जो मूलतः उसके भाव जगत के विस्तार और उसमें उसके चुनाव को बतातें है। यही भुक्ल जी ने कविता के जिस आलम्बन तत्व की समीक्षा मे चर्चा की उसे देखें तो पायेंगे कि किसी भी कवि के आलंबन निरंतर परिवर्तन ील होते है कभी नितांत निजी जगत उसका आलंबन बनता है कभी नितांत बाह्य जगत आलंबन बना करता है। पता नही, कब किस चीज से वह इतना प्रेरित द्रवित हो उठे कि कविता हो जाय – इसके लिये कोई फॉर्मूला न आज तक बना है न बन सकता है।

केदार जी जीवन आस्था के कवि है जिसे उनकी निम्न पंक्तियॉ व्यक्त करती है–

हम जिएँ न जिएँ दोस्त
तुम जियो एक नौजवान की तरह
खेत में झूम रहे धान की तरह
मौत को मार रहे बान की तरह
हम जिएँ न जिएँ दोस्त
तुम जियो अजेय इंसान की तरह
मरण के इस रण में आमरण
आकर्ण तनी
कमान की तरह।

एक बहुत आसान, सीधी–सादी, कपाट भाशा। कोई कलाकारी नही, कोई गूढ़ाँर्थ नही। जीवन के महत्तर संदे ा आसान भाशा मे ही दिये गये है। 'मौत को मार रहें बान की तरह', 'मरण के रण में आकर्ण तनी कमान की तरह'– यह क्या है? कलाकार कहेंगें कि यही बस कला है! किंतु क्या वाकई जीने की धज को एक नया अंदाज देने के लिए पहले की आसान भाशा यहॉ क्या कठिन हो गई? नही। सिर्फ दो उनमान रचे गये 'बान'और 'तनी कमान'।

कवि, जीवन में, संघर्श में, सुखमय भविश्य में और परिवर्तन में अपनी आस्था बनाए हुए है। उनकी यह आस्था एक ओर उनकी प्रेम कविताओं मे बड़ी दृढ़ता से व्यक्त हुई है। वही मेले के चित्रण से केदार जी का प्रकृति प्रेम प्रद ित होता है। गद्य साहित्य मे 'बस्ती खिले गुलाबों की' यात्रा संस्मरण, प्रकृति–प्रेम और जीवन के समन्वय का अनूठा उदाहरण है, जिसमे सोवियत रूस का, वहॉ के जन–जीवन व प्राकृतिक सौन्दर्य का यथार्थ वर्णन किया है, जो कि बड़ा हृदयग्राही चित्र प्रस्तुत करने वाला है।

केदार जी के साहित्य को मार्क्सवादी विचारधारा का साहित्य कहना उपयुक्त ही है। जीवन की कठोरता और मधुरता का समन्वय रचना मे निखार उत्पन्न कर देता है। निराला के समान क्रांति का स्वर, पीड़ितों के प्रति सहानुभूति, भाोशक वर्ग के प्रति आक्रो ा तथा किसानों के प्रति प्रेम उनकी (केदार) रचनाओं को जीवंत कर देता है, जो कि समाज के यथार्थ को बोलती हुई प्रतीत होती है। यही कारण है कि इन्हे जनवादी कवि कहा गया है।

अब कविता जनसाधारण की वस्तु है और जनसाधारण के तत्व ही उसके आव यक तत्व है। आज तो वही कविता कविता है, जो उपर्युक्त प्रगति ाील भाक्तियों का जीवन अपनाकर इन्ही से अपने आव यक तत्व प्राप्त करती है और फिर चल पड़ती है कंकड़–पत्थर के संसार के संघर्शमय धरातल पर, इस हेतु कि मरते–खपते साधारण जन का उत्साह भंग न हो, वह पीछे न लौटे, अपनी सम्पूर्ण भाक्ति से जनता के नव–निर्माण की मंजिल तय करता चलें, और यह प्रत्येक पल, प्रत्येक क्षण यही अनुभव करता चले कि हॉ, उसके साथ उसके कवि, उसके लेखक और उसका समस्त सांस्कृतिक बल है।

केदार जी की कविता में आदमी–आदमी को आदमी के धरातल पर जीता, समझता और परखता हूॅ और उसकी ओर अपनी स्थिति से प्रभावित हो–होकर कविता लिखता हूॅ। यही वजह है कि जो कुछ लिखता हूॅ वह ठोस यथार्थ से उद्भूत होता है और मेरी वाणी में युगीन स्वरों के द्वारा अभिव्यक्त होता है। परम्परा मैंने तोड़ी है, नये को पाने के लिए। नये को मैंने जीवन से जोड़ा है। मेरे नये से जिया हुआ जीवन बोला है। भले ही वह पूर्णा ा मे कला की चरम उपलब्धि न हो। मैंने कविता को जीवन से अलग नही रक्खा। इसीलिए मैं अपने मस्तिश्क के एकाकी केन्द्रों से कविता से कविता ले आने की फिकर मे नही रहा। मैंने कविता को संसार की वस्तुवत्ता से पाया है और उससे आत्मपरकता स्थापित की है और उसी आत्मपरकता को संसार के सामने उसके सम्प्रेशणीयता के लिए समर्पित भी किया है। मेरी कविता तभी तक मेरे अकेले की रहती है तक तक वह मेरी कॉपी में लिखी रहती है। लेकिन जब वह छपकर प्रका ा में चली आती है तब वह उतनी ही दूसरों की हो जाती है जितनी मेरी होती है।

प्रकृति प्रेम कें यथार्थ के परिवे ा में उनका साहित्य

केदार जी के साहित्य मे प्रकृति से अटूट संबधं दिखाई देता है उनकी प्रारंभ से लेकर अंत तक की साहित्य यात्रा मे प्रकृति के सभी रूपों को देखा जा सकता है। उनकी पंक्तियों मे यह बखूबी दिखाई देता है।

हे मेरी तुम! फूलों की बौछार से रंग–बिरंगे प्यार से–
हार गया करतार कलाकार, अपने ही दरबार में,
अपना मुकुट उतार के मुक्त हुआ भव–भार से।

पहली कविता में अवध और बुन्देलखण्ड के लोकगीतों की अनुगूँज साफ सुनी जा सकती है। ढोलक का प्रतीक भी लोकगीत के वातावरण से ही आया है। लोकगीतों के सहज परिवे ा से आकर 'ढोलक' केदार की कविता में अत्यंत जटिल वर्ग–उत्पीड़न और वर्ग–हिंसा का मार्मिक प्रतीक बन गया है। अमीर की ढोलक पर गरीब का चमड़ा मढ़ा जा रहा है। ढोलक बजती है चमड़े पर थाप पड़ने से। गरीब के चमड़े के बिना अमीर की ढोल सिर्फ पोल सिद्ध हो। गरीब के चमड़े से अमीर की ढोलक मढ़ने का रिवाज कांग्रसी रामराज की वि ोशता है। राजनीतिक और वर्ग–समाज की हिंसा– इन दोनों का जटिल परस्पर संबंध केदार की कविता मे विद्यमान है। फिर भी अभिव्यक्ति ऐसा पेचीदा रूप नही लेती जिससे कवि की बौद्धिकता उसके संबंधित पाठकों की बौद्धिकता से दूर जा पड़े और संप्रेशण बाधित हो।

जनता का सत्य जनता के ग्राह्य रूपों मे केदार ने इस तरह व्यक्त किया है कि दूर की कौड़ी लाने वाले कल्पना का कौतुक नही जान पड़ता। कल्पना की भूमिका विशय को अधिक मार्मिक बनाने वाले उपकरण जुटाने मे व्यक्त किया है कि दूर की कौड़ी लाने वाली कल्पना का कौतुक नही जान पड़ता। कल्पना की भूमिका विशय को अधिक मार्मिक बनाने वाले उपकरण जुटाने मे व्यक्त होती है। इसीलिए व्यंजना यहाँ इतनी सटीक और तीक्ष्ण है कि 'खून बहा है रामराज में' जैसा सीधा–सपाट वक्तव्य भी इसी प्रभाव को घटाता नही, बल्कि उसे कुछ और तीखा बना देता है। लोकगीतों की अनुगूँज लय में, ढोलक का प्रतीक दृ य में और खून बहने का वक्तव्य निश्कर्श रूप में – इन सब उपकरणों से बनी इस कविता मे दृ य–विधान की विलक्षण नाटकीयता है। यहॉ आप सिर्फ बुद्धि से भारीक नही होते, ऑख–कान आदि इन्द्रियों के साथ भाामिल होते है। दृ य की खूबी यह है कि आपकी कल्पना को कवि उसी दि ाा मे अग्रसर कर देता है जिस दि ाा मे वह चाहता है।

इस कविता मे दृ य, बिंब या प्रतीक– जो कहें– उसका केन्द्र है, 'फूलों की बौछार' जो भाव, कल्पना, विचार आदि की रेखाएँ आकर 'फूलों की बौछार' के केन्द्र से जुड़ जाती है और इनके माध्यम से कविता सब दि ााओं मे अपनी उंगलियाँ फैलाती है। यहाँ कल्पना ाक्ति की भूमिका पहली कविता की अपेक्षा अधिक मुखर है। 'फूलो की बौछार' में प्रकृति और प्रेम के बसंत जैसे – निराला के यहाँ, वैसे ही केदार के यहाँ घुल–मिल गये हैं। प्रकृति और मानव–जीवन की यह अविच्छिन्नता, एक सूत्रता ऐहिक जीवन को इतना राग–रंजित और काम्य बना देती है कि 'करतार कलाकार' भी अपने दरबार में पराजित हो जाता है। फूलों के रूप में वह अपना मुकुट उतार इस जीवन के आगे नत ार होता है। तुलसी के राम में भी बैंकुंठ की वेद–विदित–महिमा को ठुकराते हुए यह रहस्योद्घटन किया था – मोहि अवध सम प्रिय नहिं सोऊ। यह प्रसंग जानै कोउ–कोउ।

हिन्दी की इस दृढ़ वस्तुवादी परम्परा को भौतिकवाद की मंजिल पर लाने वाले केदार के ऐहिक जीवन की सार्थकता और सुंदरता को इतना गौरव–मंडित किया है कि उनके लिए मनुश्य प्रकृति से स्वतंत्र सत्ता रह ही नहीं जाता। उनके इस भावबोध की सं लश्ट अभिव्यक्ति उनकी प्रकृति और सौन्दर्य–संबंधी कविताए हैं। इन कविताओं में स्वभावतः उनकी कल्पना काव्य–वस्तु के अनुरूप विभिन्न संदर्भ प्रस्तुत करती है– जैसे यहाँ 'करतार कलाकार' के हार जाने का – लेकिन इस सारे कल्पना–वैभव का प्रेरणा स्त्रोत अनिवार्य रूप मे कोई प्रस्तुत दृ य या घटना ही होती है– जैसे यहाँ 'फूलों की बौछार'।

केदार की कल्पना का एक पहलू यह है कि देखे या पढ़े हुए दृ य और भाब्द उनके मस्तिश्क में घुमड़ते रहते है और कई बार, कई रूपों मे प्रकट होते है। 'वर्तमान तर्क–जाल का जूड़ा बाँधें' – यहाँ इड़ा के लिए 'कामायनी' में प्रसादजी की उपमा की गूँज साफ सुनी जा सकती है –'बिखरी अलकें ज्यों तर्क–जाल।' केदार जी ने बिखरी अलकों को वर्तमान का जूड़ा बनाकर बाँध दिया है।

केदार की रचनाओं मे प्रकृति प्रेम और पत्नी प्रेम दोनों ही दृश्टिगोचर होता है, उनकी पत्नी ही प्रेयसी है, जो कि उनकी रचनाओं मे दिखाई देती है :

''मेरी प्यारी सबसे सुन्दर

दिन से सुन्दर, निि ा से सुन्दर।''[3]

और प्रकृति पर अपनी मनोभावनाओं को व्यक्त करते हैं :

बूढ़ा पेड़ बयार बसंती
मिले मगन–मन पतझर के उपरान्त
कुहकी कोयल, देख–देख दोनों का प्यार
नैसर्गिक संभ्रान्त, पुलक उठा संसार।

केदार जी ने कमासिन गॉव के भौगोलिक परिवे ा को, उससे जुड़ी जिन्दगी के सारे आयामों के साथ रचनाओं में बड़ी सहजता के साथ मूर्त किया है, साथ ही बांदा जिले या बुन्देलखण्ड का समूचा ग्राम्य जीवन, उनके स्वभाव, संस्कार, आदत और व्यवहार का प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित दिखाई देता है।

ज्यों–ज्यों कवि का चिंतन और अनुभव बढ़ता गया त्यों–त्यों न सिर्फ प्रेम का दायरा विस्तृत होकर सामाजिक चिंताओं तक फैला है, बल्कि व्यक्तिगत संबंधों मे भी रूपान्तरण हुआ है, जिसका प्रभाव उनकी रचनाओं मे दृश्टिगोचर होता है।

कवि, जीवन में संतोश चाहता है, इसलिए अपनी उसी नदी को चाहता है जो उसे संतोश प्रदान करती है प्रेम का मनोभाव संतोश है, प्रेम की चरम स्थिति प्राप्ति में है। कवि ने नदी के प्रति जो प्रेम प्रदि ात किया है, वह नर–नारी संतोशमय प्रेम है, यही आनन्द है और नर–नारी का जीवन भी इसी सत्य पर आधारित है :

''दिन ने नदी को
नदी ने दिन को प्यार किया
दोनों ने एक–दूसरे को जिया
एक–दूसरें को जी भरकर पिया
आदमी ने दिन को काटा
नदी ने पानी को बांटा।''[4]

और यह जीवन के सत्य की नदी है, मनुश्य के जीवन का यथार्थ इसी सत्य पर आधारित है :

''दोनों हाथों मे रेती है,
नीचे अगल–बगल रेती है
होड़ राज्य श्री से लेती है
मोद मुझे रेती देती है
मै उज्जवल भविश्य निखारे
बैठा हूँ इस केन किनार।''[5]

कवि, केन नदी के किनारे बैठा चेतना ग्रहण करता है, क्योंकि यह चेतना केवल एक व्यक्ति की ही नही बल्कि सम्पूर्ण नगर की चेतना धारा है, जो जीवन के लिए है। प्रफुल्लित है और बह रही है।

प्रकृति मे कवि ने मानवीय दृश्टिकोण को सहज ढंग से देखा है प्रकृति में मानवीयकरण भी किया है। अलार्म की घंटी की आवाज प्रकृति के वातावरण की ओर इ ाारा भी करती है। कवि ने तमाम सारे साधनों को, आस–पास के क्षेत्र को, उसी आस–पास के राग को गाया भी है।

कवि का यह मानवीय दृश्टिकोण कविता के साथ पत्रों, संस्मरण, यात्रा–वृतान्त, कथा–साहित्य मे भी सहज ढंग से देखने को मिल जाता है। कवि केदार जी ने पत्रो मे जहाँ कविता की बात कही वही आपसी संबंधो की जानकारी को भी लिखा है।

केदार जी चिन्तन ाील सजग साहित्यकार है। उन्होने निरन्तर अध्ययन, चिंतन के माध्यम से परिवर्तन को कल्पना का आधार माना, धीरे–धीरे सामाजिक यथार्थ का कथा साहित्य वर्ग–संघर्श के रूप मे चित्रण किया, यही वर्ग–संघर्श मूलतः प्रगतिवादी साहित्य कहलाया।

केदार जी की मान्यता है कि मानव प्रकृति के सौन्दर्य का उपासक है। वही मानव जाति, वर्ग राश्ट्र धर्म की सीमाओं से मुक्त केवल मनुश्य कहकर दे ाकाल की परिस्थितियों के संकीर्ण आद र्ा मान्यताओं मे जीता है। आत्मा की भूख, तृप्ति और भ्ाांति के लिये भी साधना ाील है वह देह की आव यक सुविधाओं को संचित करने मे कर्म करता है, श्रमरत है।

केदार जी ने काव्य एवं गद्य लेखन की अपनी भाशा मे जीवन की सूक्ष्म से सूक्ष्म तथा स्थूल समस्याओं से जूझने का जो प्रयत्न किया है वह व्यवहारिक सत्य है। मनुश्य के आत्मवि वास मे व्यापकता है, पर यह व्यापकता जीवन जीने के साधनों को ढूँढती है।

कवि केदार का प्रकृति प्रेम भी मानव प्रेम का एक हिस्सा है, कवि का दृश्टिकोण मानववादी है, यह मानववादी हिस्सा मानव के संघर्श का ही है। भारतीय साम्यवाद की वाणी में भारत का हृदय और मस्तिश्क दोनों ही है। यह सत्य है कि प्राचीन रूढ़ियों के प्रति विद्रोह है, वह भी सजगता के रूप में है।

केदार जी ने अपने कथा–साहित्य में मनुश्य के युग संघर्श को ठोस मांस का युग माना है, जीवन की भव जीवन की समस्या रोटी–पानी का सवाल, अच्छा खाना, अच्छा पहनना, यही इस युग की मांगे भी है।

केदार जी ने भारतीय संस्कृति को जिस दृश्टिकोण से देखा–परखा है, वह भारतीय जन–जीवन का सत्य है।

केदार जी जानते थे कि पुराने लकीर पीटने वालों को कभी स्थान नही मिला, यही कारण है कि उससे हटकर जो उन्होने लिखा उसमें उनके मन की विचारधारा थी, जो परिवर्तन के साथ आई। अपने लम्बे–छोटे पत्रों मे लीक से हटकर लिखना बहुत बड़ा काम है। उन्होने पुरानी मान्यताओं, परम्पराओं को सर्वथा ठुकरा कर नया स्थान बनाया कि प्रचलित भाब्दावली का खुलकर प्रयोग किया है, जहाँ चिंतन की भाशा सहज, सरल है तथा मानवीय गुणों से परिपूर्ण भी है।

केदार जी ने जिस तरह प्रकृति में सुबह–दोपहर–संध्या को सहज रूप मे देखा है, वैसे ही मनुश्य जीवन मे इन तीनों रूपों को भी इसी रूप में देखा है। वहाँ वकालत करते समय भी

नदी, बाग, बगीचें, गॉव को नही भूलें। प्रकृति मानव की सहचरी है, यह कैसे संभव हो सकता है कि कवि हृदय इसके नजदीक न हो मानव का प्रकृति प्रेम स्वभाविक है। सूर्योदय और सूर्यास्त उसकी दिनचर्या और जीवन के अंग बन जाते है मगर केदार उन्मुक्त आनन्द और उल्लास के कवि और श्रम ाक्ति के सौन्दर्य के गायक पहले रहें है, और कुछ बाद में। भरे–पूरे ऐन्द्रिय अनुभूतियों के कवि। मसलन 'खेत का दृ य' गीत मे देखियें। ऋतु के राग–रंग में विभोर कवि कह उठता है :

''मैंने ऐसा दृ य निहारा, मेरी रही न मुझे खबरिया''
आसमान की ओढ़नी ओढ़े धानी पहने फसल घँघरिया
राधा बन कर धरती नाची नाचा हँसमुख कृशक सँवरिया
माती बाप हवा की पड़ती पेड़ों की बज रही ढुलकिया
जी–भर फाग पखेरू गाते ढरकी रस की राग–गगरिया

प्रकृति मनुश्य–हृदय का दर्पण होती है। वह उसके दुख मे दुखी और सुख मे सुखी दिखाई देती है। अपनी भावनाओं के अनुरूप ही मनुश्य प्रकृति कों देखता है, इसलिए प्रकृति के प्रति जागरूकता, उसके प्रति सौन्दर्य–दृश्टि, प्रकृति से संबंध स्थापित करते हुए, अपने रि तो को बांधता है :

''मेरी तुम, मेघ मालिनी
गहन गगन में
सजल सांवली छा जाओंगी
और प्यार की
जल फुहार सी आ जाओंगी
इस धरती पर मुझे भेटने।''[6]

मेरे वि वास है कि केदार जी का साहित्य दे ा और समाज को एक नवीन प्रका ा, एक नवीन दि ाा देता है और हमे ाा देता रहेगा व केदार जी सदैव अज्ञान की तमिस्त्रा को मिटाकर संसार मे प्रका ा देने वाले सूरज की तरह अपनी कृतियों से युगों–युगों तक प्रका ा फैलाते रहेंगें।

1. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद : त्रिभुवन सिंह, पृ0 33
2. केदारनाथ अग्रवाल : अजय तिवारी, पृ0 104, गहरी आस्था का कवि
3. गुलमेंहदी : केदारनाथ अग्रवाल, पृ0 17
4. पंख और पतवार : केदारनाथ अग्रवाल (कविता – दिन, नदी और आदमी से)
5. गुलमेंहदी : केदारनाथ अग्रवाल, पृ0 108
6. गुलमेंहदी : आज अभी आंखो से : केदारनाथ अग्रवाल